अथ षष्ठोऽध्यायः

छठा आतमसंयमयोग अद्धयाय

श्रीभगवानुवाच

अनाश्रितः कर्मफलं, कार्यं कर्म करोति यः।
स संन्यासी च योगी च, न निरग्निर्न चाक्रियः।। १

स्रीभगुवान् बोल्ले

(करम योगी की महिमा)

नाँ हो आस्रित करम फळाँ पै, बाट न देक्खै फळ की माणस।
करणै आळे करम करै जो, वो सै त्यागी सन्न्यासी अर।।
करमयोग तैँ योगी वो ए, ना वो योगी हो सै माणस।
तन मन वाणी पै ला पहरा, करम छोड कैँ बैट्ठै सै जो।। १

यं संन्याससमिति प्राहुर्योगं तं विद्धि पाण्डव।
न ह्यसंन्यस्तसंकल्पो, योगी भवति कश्चन।। २

जिस नै 'सन्न्यास' कहैँ ग्यान्नी, सास्त्र जाणदे लोग बतावैँ।
'योग' उस नै जाण तैँ अर्जन, नाँ जो छोड्डै फळ की इच्छा।
नाँ वो 'योगी' होन्दा कोए।। २

आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं, कर्म कारणमुच्यते।
योगारूढस्य तस्यैव, शमः कारणमुच्यते।। ३

चढ़णा चाह्वै निस्काम करम पै, करमाँ कै फळ की तिस्णा छोड्डै।
मौन धारदा न्यूँ जो योगी, करम कुहावै सै उस का साधन।।
निस्काम करम कर चित की व्रित्ती, सान्त सभी हो ज्याँ सैँ उस की।
तद वो योगारूढ बणै सै, एक ततव पै चित सै लाग्गै।। ३

यदा हि नेन्द्रियार्थेषु, न कर्मस्वनुषज्जते।
सर्वसंकल्पसंन्यासी, योगारूढस्तदोच्यते।। ४

(करमयोग पै चढ्यै का लच्छण)

जिब नाँ इन्द्री के बिसयाँ मैँ, नाँ सब तह्रियाँ के करमाँ मैँ।
किमे प्रयोजन सै वो देक्खै, फँसदा माणस राग भाव तैँ।।

सारी इच्छा संकल्पाँ नै, छोड्डै सै जिद माणस कोए।
चढ्या योग पै तदै कुहावै।। ४

उद्धरेदात्मनाऽऽत्मानं, नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः।। ५

(आप्पा आप्णा बन्धु सत्रु सै)

ऊप्पर राक्खै बन्धन तैँ न्यूँ, फळ की इच्छा त्याग स्वयं तैँ।
खुद नै माणस योग साधदा, नाँ खुद नै राग बन्धनाँ कै।।
नीच्चै गेरै कद्दे साधक, आप्पा ए सै आप्णा बन्धू।
हितकर हो सै खुद्दै खुद का, आप्पा ए सै दुस्मन आप्णा।
खुदै बिगाड़ै आप्णा आग्गा।। ५

बन्धुरात्माऽऽत्मनस्तस्य, येनात्मैवात्मना जितः।
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे, वर्तेतात्मैव शत्रुवत्।। ६

बन्धु हितैसी बखत पड्यै पै, काम आणियाँ खुद्दै खुद का।
हो सै माणस वो ए जिस नै, आप्पा खुद तैँ ए सै जीत्या।
आप्पा जिस का बस मैँ नाँ सै, वो सै आप्पै आप्णा दुस्मन।। ६

जितात्मनः प्रशान्तस्य, परमात्मा समाहितः।
शीतोष्णसुखदुःखेषु, तथा मानापमानयोः।। ७

जीत लिया सै आप्पा जिस नै, इन्द्रिय मन नै बस मैँ कर कैँ।
भोत सान्त वो हो ज्या माणस, उस का आप्पा मन अर बुद्धी।।
इज्जत-बेइज्जत दोन्नूँ मैँ, सम वो रहँदा बिचळै नाँ सै।
अति समाधान वो पा ले सै, सङ्का साँस्से कुछ नाँ रहँदे।। ७

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः।
युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकाञ्चनः।। ८

(समदर्सी योगी हो सै)

सास्तर गुरु तैँ मिल्या ग्यान जो, चिन्तन ओर मनन अनुभव तैँ।
निजी बणाए खास ग्यान तैँ, तिरपत होगी मन अर बुद्धी।।

जिस की नाँ वो माणस डिगदा, बिसयाँ मैँ सै हो कैँ स्थित बी।
जीत्तै ग्यान करम की इन्द्री, मन नै बी वो जीत्तै माणस।।
एक जिसे होवैँ सैँ सारे, माट्टी, पात्थर, स्योन्ना, चान्दी।
जुड्या कुहावै परम ततव तैँ, योग्गी वो ए माणस हो सै।। ८

सुहृन्मित्रार्युदासीन-मध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु ।
साधुष्वपि च पापेषु, समबुद्धिर्विशिष्यते।। ९

[१]दिल तैँ आच्छा, जो बिन कारण, भला करै सै सब का माणस।
[२]प्यार कारणै नरमाया जो, बिपत् कष्ट मैँ रक्षा करदा।।
[३]'अरि' जो नाँ दे, करड़ा रहँदा, बखत पड्यै पै धन कै होन्दै।
[४]ऊप्पर बैठ्या देक्ख्यैँ जावै, सुख-दुख मैँ जो सामिल नाँ हो।।
[५]दो कै बीच्चूँ खड्या बिचोळी, दोन्नूँ का ए हित जो सोच्चै।
[६]द्वेस बिसै जो बुरा चाहँदा, ओर [७]बँध्या जो रिस्तै-नातै।।
इन सब तह्नियाँ कै बारै मैँ, [८]पर-उपकारी पुन्यात्मा मैँ।
[९]ओराँ नै अर कस्ट देणिये, पाप्पी इन से नीच जण्याँ मैँ।।
एक जिसी ए समझ राखदा, एक्कै परम लखै सै माणस।
समदर्सी वो माणस सब तैँ, योगी वो सै बन्धन-छूट्टया।। ९

योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः।
एकाकी यतचित्तात्मा, निराशीरपरिग्रहः।। १०

(योग-साधना की प्रक्रिया)

योगी मन की गलत दिसा मैँ, जान्दी नाँ निस्चित भरमाई।
इत-उत बिखरी, सब्बै हालत, काब्बू मैँ कर जोड़ै नित मन।
एक लक्ख्य पै स्थापित कर कैँ, बैठ किसै एकान्त जघाँ मैँ।
बस मैँ कर कैँ तन मन बुद्धी, रहै एकला तज कै तिस्णा।
नाँ चाहै कुछ आप्णी खात्तर, ठाठ-बाठ अर सुख साधन तज।। १०

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य, स्थिरमासनमात्मनः।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं, चैलाजिनकुशोत्तरम्।। ११

साफ-सूथरी जाग्घाँ मैँ जा, ओर बिछा थिर आस्सण आप्णा।
भोत न ऊँच्चा, भोत न नीच्चा, कपड़ा, म्रिगछाळा, कुस ऊपर।
उभ-चुभ नाँ वो महसूस करै, कोमल, सुखकर, चुभै न जिस तैँ।। ११

तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा, यतचित्तेन्द्रियक्रियः।
उपविश्यासने युञ्ज्याद्, योगमात्मविशुद्धये।। १२

उस आसण पै बैठ्या योग्गी, मन की चञ्चलता परै बगा।
एक लख्य्य पै थिर कर मन नै, बस मैँ कर चित्त इन्द्रियाँ की।।
किरिया सारी योग्गी जोड़ै, एक ध्येय पै मन वो आप्णा।
मन बुद्धी नै शुद्ध करण नै।। १२

समं कायशिरोग्रीवं, धारयन्नचलं स्थिरः।
संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं, दिशश्चानवलोकयन्।। १३

एक सीध मैँ धड़, सिर, गर्दन, निस्चल कर कैँ धारण करदा।
देख आपणी नाकनोँक नै, अधमुँद आँक्ख्याँ तैँ नाँ देक्खै।
ओर दिसा मैँ इत-उत योगी।। १३

प्रशान्तात्मा विगतभीर्, ब्रह्मचारिव्रते स्थितः।
मनः संयम्य मच्चित्तो, युक्त आसीत मत्परः।। १४

राग द्वेस से दोस मिट्यैँ तैँ, सान्त-चित्त अर निर्भय हो कैँ।
ब्रह्म ततव नै समझण खात्तर, रहण-सहण की रीत चालदा।।
मन की चञ्चलता कर बस मैँ, मुझ पैँ आप्णा चित्त लगा कैँ।
योगी बैट्ठे मन्नै ए 'पर', सब तैँ ऊँच्चा लख्य्य समझ कैँ।
मुझ पै आस्रित हो कैँ साधक।। १४

युञ्जन्नेवं सदात्मानं, योगी नियतमानसः।
शान्तिं निर्वाणपरमां, मत्संस्थामधिगच्छति।। १५

(योग साधना का फळ)

ध्यान समाधी मैँ न्यूँ बैठ्या, सदा आपणै निर्मळ मन नै।
बस मैँ कर कैँ बुझदा दीवा, ज्यूँ सै, आप्णा करम भोग कैँ।

बुझ कैं मेरे मैं स्थित होवै, जलम-मरण कै बन्धन तैं छुट।
परम सान्ति वो पावै माणस।। १५

नात्यश्नातस्तु योगोऽस्ति, न चैकान्तमनश्नतः।
न चातिस्वप्नशीलस्य, जाग्रतो नैव चार्जुन।। १६

(योग-साधना कै योग्य कोण नाँ)

भोत खाणिये माणस तैं नाँ, योग बणै अर नाँ खान्दै तैं।
अर नाँ ए भोत सोणियै तैं, जाग्ग्या रहँदै तैं बी अर्जन।। १६

युक्ताहारविहारस्य, युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य, योगो भवति दुःखहा।।१७

(किस के दुखड़े योग मिटावै)

ठीक करै जो खाणा-पीणा, रहणा-सहणा बी ठीक करै।
ठीक जतन जिस का काम्माँ मैं, सही ढाळ सै सोणा-उठणा।
जिस माणस का हो सै उस कै, योग दुखाँ का नासक हो सै।। १७

यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते।
निःस्पृहः सर्वकामेभ्यो, युक्त इत्युच्यते तदा।।१८

(योगी का लच्छण)

जिद काब्बू कर राक्ख्या मन सै, आप्णै भीत्तर ए टिक रहँदा।
हटै ल्हालसा सब बिसयाँ की, योग्गी न्यूँ बोल्ल्या जा सै तद।। १८

यथा दीपो निवातस्थो, नेङ्गते सोपमा स्मृता।
योगिनो यतचित्तस्य, युञ्जतो योगमात्मनः।। १९

ज्यूँ दीप हवा कै झौक्कै बिन, नाँ लरजै वा मिसाल बोल्ल्या।
योगी की, जो बस कर मन नै, लाग्ग्या ह्वै योग्गाँ मैं आप्णै।। १९

यत्रोपरमते चित्तं, निरुद्धं योगसेवया।
यत्र चैवात्मनाऽऽत्मानं, पश्यन्नात्मनि तुष्यति।। २०

मन की जिस एकागरता मैं, सान्त निचळा बैठ ज्या मन सै।
रोक्क्यै होड़ा योग साध कैं, जिसै हाल मैं खुद तैं खुद नै।

देक्खण आळा खुद मैं खुस हो।। २०

सुखमात्यन्तिकं यत्तद्, बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम्।
वेत्ति यत्र न चैवायं, स्थितश्चलति तत्त्वतः।। २१

खुसी बेओड़ जो सै जिस नै, केवल बुद्धी पकड़ सकै सै।
महसूसै जिस नै कर पावै, नाँ सै जिस का साधण कोए।।
दूर घणा सै इन्द्रियगण तैं, महसूस करै वो सुख जिस मैं।
नाँ यो टिक कैं बिचळै तत तैं।। २१

यं लब्ध्वा चापरं लाभं, मन्यते नाधिकं ततः।
यस्मिन् स्थितो न दुःखेन, गुरुणाऽपि विचाल्यते।। २२

जिस नै पा अर ओर लाभ नै, मान्नै नाँ यो जादा उस तैं।
जिस आनँद मैं टिक कैं नाँ यो, दुक्ख बड़ै तैं बी बिचळै सै।। २२

तं विद्याद् दुःखसंयोग-वियोगं योगसंज्ञितम्।
स निश्चयेन योक्तव्यो, योगोऽनिर्विण्णचेतसा।। २३

उस नै जाणै समझे माणस, सभी तह्याँ के दुक्खाँ तैं ए।
दुनियाँदारी, संजोग्गाँ का, बियोग 'योग' नाम तैं जाण्या।।
वो सै कतिये करणै जोग्गा, ठाण ह्रिदे मैं, 'करणा ए यो'।
निस्चै कर कैं सर्धा तैं अर, बिना ऊबदै मन तैं अर्जन।। २३

संकल्प्रभवान्कामांस्, त्यक्त्वा सर्वानशेषतः।
मनसैवेन्द्रियग्रामं, विनियम्य समन्ततः।। २४

सोच बिसै नै होणै आळी, चाहत तज सब जड़ामूळ तैं।
मन तैं ए रोक इन्द्रियाँ नै, मन नाँ जाणै दे उन कान्हीं।
सब कान्हीं तैं घेर-घार कैं, बाँद्धै उन नै खूँट्टै पै ल्या।। २४

शनैः शनैरुपरमेद्, बुद्ध्या धृतिगृहीतया।
आत्मसंस्थं मनः कृत्वा, न किंचिदपि चिन्तयेत्।। २५

होळै-होळै, हाँग्घै तैं नाँ, हट ज्या साधक सब विसयाँ तैं।
धीरज धरदी बुद्धी द्वारा, खुद नै समझण मैं स्थित मन कर कैं।

ना कुछ बी सोच विचार करै।। २५

यतो यतो निश्चरति, मनश्चञ्चलमस्थिरम्।
ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत्।। २६

जित-जित तैँ निकळै मन चञ्चल, टिकदा नाँ जो एक बिसै पै।
उत-उत तैँ ए रोक इसै फिर, आप्णी बुद्धी कै बस कर ले।। २६

प्रशान्तमनसं ह्येनं, योगिनं सुखमुत्तमम्।
उपैति शान्तरजसं, ब्रह्मभूतमकल्मषम्।। २७

(योगसाधना का फळ)

सीळा पड़ग्यै मन आळै का, सान्त रजोगुण हो ज्यावै सै।
पाप-पुण्यमय काळस हट ज्या, ब्रह्मरूप यो हो ज्यावै सै।
इस तह्रियाँ कै इस योगी नै, आनन्द घणा मिल ज्यावै सै।। २७

युञ्जन्नेवं सदाऽऽत्मानं, योगी विगतकल्मषः।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते।। २८

बस मैँ करदा मन न्यूँ योगी, पाप-पुण्यमय कीच हटावै।
आसानी तैँ ब्रह्मलीन हो, जिस तैँ बढ कैँ कुछ नाँ होवै।
अन्त न जिस का कदे कितै हो, आनन्द परम वो सै पावै।। २८

सर्वभूतस्थमात्मानं, सर्वभूतानि चात्मनि।
ईक्षते योगयुक्तात्मा, सर्वत्र समदर्शनः।। २९

(योगी का स्वरूप अर महिमा)

सब कुछ जो सै इस दुनियाँ मैँ, उन मैँ स्थित खुद नै अर उन नै।
खुद मैँ देक्खै रोक चित्त की, व्रित्ती आळा माणस जुड़ कैँ।
नित्य ततव मैँ, सब मैँ हो कैँ, एक नज़र तैँ देक्खण आळा।। २९

यो मां पश्यति सर्वत्र, सर्वं च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि, स च मे न प्रणश्यति।। ३०

जो मुझ परमात्मा नै देक्खै, सब मैँ, सब नै मुझ मैँ देक्खै।
उस तैँ नाँ मैँ दूर कदे सूँ, वो बी मुझ तैँ नाँ दूर कदे।। ३०

सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः।
सर्वथा वर्तमानोऽपि, स योगी मयि वर्तते।। ३१

सब कुछ जो सै, उस मैँ मन्नै, स्थित नै सेवै एक बण्या जो।
सभी ढाळ के पापपुण्यमय, ब्योहार जगत् के करदा बी वो।
योगी सै अर मेरे मैँ ए, हो कैँ मन्मय ब्योहार करै सै।। ३१

आत्मौपम्येन सर्वत्र, समं पश्यति योऽर्जुन।
सुखं वा यदि वा दुःखं, स योगी परमो मतः।। ३२

खुद ए खुद-सा हो कैँ जो सै, खुद कै बरगा खुद ए हो कैँ।
सब मैँ सम जो एक ततव नै, देक्खै, समझै जो सै अर्जन।
सुख या दुख नै एकसरीखा, वो योगी सब तैँ बढ मान्या।। ३२

अर्जुन उवाच

योऽयं योगस्त्वया प्रोक्तः, साम्येन मधुसूदन।
एतस्याहं न पश्यामि, चञ्चलत्वात् स्थितिं स्थिराम्।। ३३

अर्जन बोल्ल्या

(चञ्चल मन नै कठिन साधणाँ)

जो यो योग बताया तन्नै, सब नै देक्खूँ एक ततवमय।
किरसण, इस की मैँ नाँ समझूँ, चञ्चल होणै तैँ स्थिति टिकदी।। ३३

चञ्चलं हि मनः कृष्ण, प्रमाथि बलवद् दृढम्।
तस्याहं निग्रहं मन्ये, वायोरिव सुदुष्करम्।। ३४

चञ्चल क्यूँकी मन सै किरसण, मथदा काया, इन्द्री सारी।
तगड़ा, ठाड्डा, जोर ज़बर यो, रोक इसै मैँ पाणा मान्नूँ।
प्रबळ बाळ नै ज्यूँ सै मुस्कल।। ३४

श्रीभगवानुवाच

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासेन तु कौन्तेय, वैराग्येण च गृह्यते।। ३५

स्रीभगुवान् बोल्ले

(मन साद्धण के दो उपाय)

ना साँस्सा, बड़ी भुजा आळे, चञ्चल मन पै काब्बू मुस्कल।
नित्त जतन तैं कुन्ती के सुत, राग तोड़ कैँ काब्बू आन्दा।। ३५

असंयतात्मना योगो, दुष्प्राप इति मे मतिः।
वश्यात्मना तु यतता शक्योऽवाप्तुमुपायतः।। ३६

काब्बू मैँ नाँ मन नै रखदै, माणस नै योग मिलै मुस्कल।
मेरी बुद्धी यो सै कहँदी, बस मैँ राक्खै मन नै जो तो।
करै जतन जो, वो पा सकदा, कह्या तरीका आप्णा माणस।। ३६

अर्जुन उवाच

अयतिः श्रद्धयोपेतो, योगाच्चलितमानसः।
अप्राप्य योगसंसिद्धिं, कां गतिं कृष्ण गच्छति।। ३७

अर्जन बोल्ल्या

(भटक्यै योगी की के गत होवै?)

[१]नाँ हो कोए जती संजमी, [२]जतन करै नाँ जोग ध्यान पै।
[३]सर्धा राक्खै, खाल्ली-पील्ली, [४]डिग्या योग तैँ सै मन रहँदा।।
[५]करमयोग तैँ बिचळ्यै मन का, [६]नाँ पा योगमार्ग मैँ सिद्धि।
के गत किरसण, वो सै पावै?।। ३७

कच्चिन्नोभयविभ्रष्टश्छिन्नाभ्रमिव नश्यति।
अप्रतिष्ठो महाबाहो, विमूढो ब्रह्मणः पथि।। ३८

कदे करम अर योग-मार्ग इन, दोन्हूँ रस्त्याँ तैँ भटक्योड़ूहा।
खिँढ कैँ बिखर्‌यै बाद्दळ बरगा, बेपेन्दी-सा आधार बिना।।
हो कैँ माणस मूढ बण्या, ब्रह्मज्ञान कै रस्तै ऊपर।
भटक्या ऊब्ब्या खतम न हो ज्या, बिक्रमसाळी बाज्जू आळे।। ३८

एतन् मे संशयं कृष्ण, छेत्तुमर्हस्यशेषतः।
त्वदन्यः संशयस्यास्य, छेत्ता न ह्युपपद्यते।। ३९

यो मेरा संस्सै तैँ किरसण, काट सकै सै इब पूरा ए।

तेरै तैँ दूज्जा कोए इस, संस्सै का काट्टणियाँ नाँ सै।। ३९

श्रीभगवानुवाच

पार्थ नैवेह नामुत्र, विनाशस्तस्य विद्यते।
न हि कल्याणकृत्कश्चिद्, दुर्गतिं तात गच्छति।। ४०

स्रीभगुवान बोल्ले

(आच्छै रस्तै चाल्लणियै का, बुरा कदे नाँ होवै सै)

[१]पिरथा के जाए रै अर्जन, नाँ ए इत, ना उस दुनियाँ मैँ।
खतम नहीँ वो होवै कद्दे, आच्छे काम करणिये की नाँ।।
दुर्गति कद्दे होवै भाई।। ४०

प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः।
शुचीनां श्रीमतां गेहे, योगभ्रष्टोऽभिजायते।। ४१

(भटक्यै योगी की या गत होवै)

[२]पा पुण्य करणियाँ की दुनियाँ, उस मैँ रह कैँ भोत बखत तक।
सुद्ध पवित्तर आचारनिस्ठ, स्रीमान्नाँ कै घर 'योगभ्रस्ट'।
गिर्‌या योग तैँ, पैदा हो सै।। ४१

अथवा योगिनामेव, कुले भवति धीमताम्।
एतद्धि दुर्लभतरं, लोके जन्म यदीदृशम्।। ४२

[३]या ज्ञान्नी योगी कै कुळ मैँ, हो सै जलम इसै माणस का।
यो सै मुस्कल पाणा भौत्तै, दुनियाँ मैँ जो जलम इसा हो।। ४२

तत्र तं बुद्धिसंयोगं, लभते पौर्वदेहिकम।
यतते च ततो भूयः, संसिद्धौ कुरुनन्दन।। ४३

उस मैँ उस पाच्छै कै तन कै, सँजोग ज्ञान का पावै वो।
जतन करै अर उस तैँ जादा, ओज्जू तैँ सिद्धी पाणै खात्तर।
कुरु कै कुळ नै खुस करणाळे, अर्जन, सुण ले बात तन्त की।। ४३

पूर्वाभ्यासेन तेनैव, ह्रियते ह्यवशोऽपि सः।
जिज्ञासुरपि योगस्य, शब्दब्रह्मातिवर्तते।। ४४

पाछळै उस अब्भ्यास तैँ ए, ले ज्याया जा सै परबस वो।

जिग्ग्यासू बी योगबिसै मैँ, सब्द शास्त्र तैँ बोल बताए।।
कर्म करणियै तैँ बढ़ हो सै, बिसै सबद का जो ब्रह्म जगत् सै।
उस नै बी वो पार करै सै।। ४४

प्रयत्नाद् यतमानस्तु, योगी संशुद्धकिल्बिषः।
अनेकजन्मसंसिद्धस्, ततो याति परां गतिम्।। ४५

खूब जतन कर जोग साधदा, योगी सुच्चा पाप मिट्यै हो।
कई जलम मैँ सिद्धी पा कैँ, पाच्छै पावै परम गती वो।
आग्गै बढदा होळे-होळे।। ४५

तपस्विभ्योऽधिको योगी, ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी, तस्माद् योगी भवार्जुन।। ४६

(योगी की परसंसा)

तन नै मन नै कस्ट देण कै, तप मैँ लाग्यै तपसी जन तैँ।
योग्गी बढ कैँ होवै सै अर, ग्यान भोत-सा पायाँ तैँ बी।
मान्या जा सै जादा योगी, आप्णा करम निभाणाळ्याँ तैँ।
बढ कैँ हो सै योगी अर्जन, इस कारण तैँ योगी बण ज्या।। ४६

योगिनामपि सर्वेषां, मद्गतेनान्तरात्मना।
श्रद्धावान् भजते यो मां, स मे युक्ततमो मतः।। ४७

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे आत्मसंयमयोगो नाम षष्ठोध्यायः।।६।।

योगी बी जो कई ढाळ के, उन सब मैँ जो मन्नै अर्पित।
कर कैँ बुद्धी सर्धा आळा, सेवै मन्नै उस नै सब तैँ।
बडळा योगी अर्जन मान्नूँ।। ४७

स्रीमती सीत्तादेब्बी अर स्रीस्रीनिवास सास्तरी कै बेट्टै सिवनारायण सास्तरी कै हरियाणी भास्सा कै गीत्तायन काब्ब्यभास्य मैँ छठा अध्याय पूरा होया।। ६।।

पूर्वसलोकयोग २३३ + ४७ = २८०